VOL- VII ISSUE- XII DECEMBER 2020 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 6.293 ISSN 2349-638x

इक्कीसवीं सदी में भी राम . . .!

डॉ. रचना बिमल
स. प्रोफेसर,
सत्यवती महाविद्यालय,
दिल्ली विष्वविद्यालय, दिल्ली

२१ वीं सदी 'फास्ट एंड फारवर्ड' की सदी, जहाँ अब कोई रूक कर थिर नहीं होना चाहता और जब थिर नहीं होना तो 'स्थित प्रज्ञ' होने का तो अर्थ ही नहीं है। कल तक जो भोगवादी वस्तुएँ दुर्लभ और चंद धनाढ्यों तक ही उपलब्ध थी वे आज विज्ञान, तकनीक और सूचना क्रांति के संवाहक 'मीडिया' के द्वारा आम जन तक पहुँच गई है। सब कुछ बहुत जल्दी पा लेने की उत्कंठा में संलग्न आकांक्षियों की तादाद में तेजी से वृद्धि हो रही है। नतीजा साम, दाम, दण्ड, भेद के उपायों से आगे बढ़ने के आकांक्षी, मानवता को अपने पाँव तले रौंद रहे हैं, प्रकृति का विनाष कर रहे हैं और स्वयं को सृष्टि का नियंता मानने का अहंकार पाल बैठे हैं। इन सिरफिरों के कारण ही दुनिया कंकरीट के जंगलों में तब्दील हो रही है। आतंकवादियों की गोलियों का षिकार हो रही है, धर्म और सम्प्रदायों के ठेकेदारों द्वारा पीड़ित जनों को बरगलाया जा रहा है। ऐसे में अचानक सुई की नोंक से भी छोटा वायरस बोतल के जिन्न की तरह बाहर आ धमका और जिसके खौफ से व्योम नापते पाँव जमीन से चिपक गए। दुनिया की तथाकथित प्रगति के पहियों को ब्रेक लग गया। कथित महान राजनेताओं, मठाधीषों के साथ-साथ आम आदमी स्वयं अपने आपको घरों में कैद करने पर मजबूर हो गया। फिर शुरू हुआ कैदखाने में तब्दील घरों के निवासियों को अवसाद, डर, भय, संत्रास जैसे अवगुणों से मुक्त कराने का प्रयास! दिन रात चीखते-चिल्लाते, टी.आर. पी. की होड़ में मर्यादाओं की सीमाओं को लाँघते टी. वी. चैनलों पर तमाम कथित लोकप्रिय टी.वी. सीरियल्स दिखाए जाने लगे। लेकिन एक दिन खबर मिली कि सारे टी.वी. चैनल्स उस एक पुराने टी.वी. कार्यक्रम के सामने नहीं टिक पाए जो नब्बे के दषक में भारत ही नहीं बल्कि उसके पड़ोसी देष- पाकिस्तान, बांग्लादेष, नेपाल, श्रीलंका और जहाँ कहीं भी दूरदर्षन देखा जाता था वहाँ की सड़कें सूनी कर देता था, वह सीरियल था- **'रामायण'**। पुरानी पड़ती फिल्मांकित रील में भी ऐसा आकषर्ण था कि 'लॉकडाउन' में बड़े-बूढ़े ही नहीं बच्चे भी कार्टून करैक्टर भूलकर रामकथा के पात्रों से जुड़ गए। एक बार फिर 'राम' के आकर्षण के आगे सब कार्यक्रम फीके पड़ गए। बॉलीवुड, हॉलीवुड के सितारों के रंग उड़ गए। आखिर राम के भीतर वो कौन सा आकर्षण है जो उत्तर वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल तक फीका नहीं हुआ। जब-जब भी किसी साहित्यकार को महान नायक की खोज करनी पड़ी तब-जब उसकी दृष्टि राम पर ही जाकर क्यों ठहर जाती है? क्यूँ वर्तमान युग की समस्याओं के समाधान के लिए महात्मा गाँधी जैसे राजनेता की दृष्टि भी राम पर ही टिक जाती है और वे भी तुलसीदास के समान 'रामराज्य' का स्वप्न देखने लगते हैं क्योंकि राम के राज्य में ही-

सब नर करहिं परस्पर प्रीति।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति रीति।।[1]

यानि तुलसी और गाँधी के मध्य लगभग ४०० वर्ष का अंतराल है पर गाँधी को राम के सिवा कोई ऐसा नायक नहीं मिला जो स्वतंत्र भारत का आदर्ष बन

सके। स्वयं गोस्वामी तुलसीदास भी तो वेद, उपनिषद्, संहिताओं की वीथियों को खंगालते हुए 'राम' के शरणागति हुए थे। वे स्वयं लिखते हैं-

नाना पुराणनिगमागमसम्मतं यद्
रामायण निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि[२]

अर्थात् नाना पुराण, निगम, आगम तथा तदनुसारी सन्तों के अनुभवों के आधार पर ही रामचरितमानस् की रचना हुई है। किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व और कृतित्व की सही समझ के लिए उसके युगीन परिवेष, व्यक्तिगत जीवन की परिस्थितियों और परम्परागत सामाजिक-साहित्यिक विचारधाराओं का गम्भीर ज्ञान आवष्यक है। इन तीन प्रमुख स्रोतों से ही साहित्यकार अपने विकास की सामग्री अर्जित करता है और इन तीनों के सम-विषय तत्त्वों से जूझकर ही उसकी लेखनी अपने युग की विषमताओं का समाधान खोजने का प्रयास करती है। लेकिन जब उसे अपने युग में कोई ऐसा नायक नहीं मिलता जो युगीन समस्याओं का समाधान दे सके तो गम्भीर साहित्यकार अतीत का अन्वेषण करने पर मजबूर हो जाता है। सुप्रसिद्ध साहित्यकार अज्ञेय ने अपने दौर के साहित्यकारों पर लिखा था- **"समकालीन प्रवृत्ति नायकवाद के विरुद्ध नहीं तो उसके प्रति उदासीन आवष्यक है- समकालीन हिन्दी लेखन की दृष्टि साधारण मनुष्य की ओर है।"[३]** साधारण मनुष्य को नायक बनाकर उसके दुःख दर्द का चित्रण करने की प्रवृत्ति को भी कमतर नहीं आंका जा सकता लेकिन साधारण मानव का जीवन चरित दुःखों को समाधान भी नहीं देता। इसीलिए महामानव की तलाष कर उसका गुणगान कर उसे नायकता प्रदान की जाती है। महामानव वह होता है जो निजी सुख-दुःख को एक किनारे रख परहित में 'स्व' को अर्पित कर दे। राम से बड़ा महामानव कौन होगा जो समाज के परोपकार हेतु किषोरावस्था में ऋषि विष्वामित्र के साथ जंगलों में गए, समाज से बहिष्कृत अहिल्या के आश्रम में जाकर उसे सामाजिक स्वीकृति दिलाकर स्त्री की गरिमा को पुनःस्थापित किया। आगे चलकर पिता के वचन की रक्षा के लिए १४ वर्ष वन में गए। पत्नी के स्वाभिमान, स्त्री की स्वतंत्रता के लिए रावण से युद्ध किया और फिर उसी प्रिया को मात्र एक शंका के आधार पर त्याग भी दिया क्योंकि प्रजा पर नहीं अपनी अर्धांगिनी पर ही अधिकार समझा! दुनिया के इतिहास में पति-पत्नी का ऐसा त्याग और कहाँ मिलेगा? राम ने अपना जीवन कहाँ जिया वे तो दूसरों के लिए ही जीते रहे। लोक को राह दिखाने के लिए, जीवन कैसा हो? यह समझाने के लिए ही महर्षि वाल्मीकि ने रामकथा को जनसाधारण के लिए लिखा-

ऋषिणां च द्विजातीनां साधूनां च समागमे।
यथोपदेषं तत्वज्ञौ जगतुः सुसमाहितौ।।

और फिर तो मानों राम कथा को पंख मिल गए। ईसा से लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व उत्तर वैदिक काल में बाल्मीकि रामायण के माध्यम से रामकथा जन-जन की कण्ठहार बन गई। बाल्मीकि से पूर्व जो रामकथा वेदों में मात्र स्फुट और स्वतंत्र रूप से पाई जाती थी, वह सम्पूर्ण मानव जीवन का प्रतीक बन गई। जन ने भी राम को लोकनायक से आगे बढ़कर देवत्व की उपाधि देते हुए विष्णु के दस अवतारों में से एक अवतार मान लिया। बौद्धों ने बुद्ध को राम का अवतार स्वीकार कर लिया तो जैन मत में राम आठवें बलदेव के रूप में प्रतिष्ठित हुए। संस्कृत के प्रतिष्ठित काव्यग्रंथों की आधारभूति भी 'रामायण' ही है। रघुवंष, भट्टकाव्य, महावीर चरित, उत्तररामचरितम्, प्रतिमा नाटक, जानकीहरण, कुन्दमाला, अनर्घराघव, बाल रामायण हनुमन्नाटक, अध्यात्म रामायण, अद्भुत रामायण, आनंद रामायण, कम्ब रामायण आदि अनेक काव्य-कृतियाँ इस तथ्य की द्योतक है कि भारतवर्ष के कवियों पर राम की कथा का कितना गहरा प्रभाव पड़ा है। इतना ही नहीं भारत भूमि के वैविध्यधर्मी क्षेत्रों में भी रामकथा को सुसंस्कृत जनों से लेकर लोक तक ने जिस सहजता से अपनाया है उसका अन्य उद्धहरण मिलना दुर्लभ है। भारत भूमि में उत्तर से दक्षिण की

यात्रा पर निकले तो रामकथा भाषा और क्षेत्र के साथ किंचित कलेवर बदलकर साथ-साथ चलती है। कष्मीरी भाषा में रामवतार चरित, पंजाबी-दिलषाद रामायण, गुजराती रामचरित, असमी-माघव कंदली, नेपाली-भानुभक्त को रामायण व बंगला-कृतिवास रामायण, तमिल की कम्ब रामायण, तेलगू की द्विपाद रामायण, मलयालम रामचरितम्, कन्नड़-तोखे रामायण, उड़िया- बलरामदास-रामायण, मराठी- भावार्थ रामायण, उर्दू में रामायण खुष्तर आदि रामकथा की सुगन्ध अपने-अपने तरीके से अपने भाषा- भाषियों में बिखेर रही हैं।

राम की सुगन्ध तो दिगन्त तक व्याप्त है सम्भवतः इसीलिए प्रथम शताब्दी ईस्वी से ही बौद्ध धर्म प्रचारकों, व्यापारियों और मेहनत-मजदूरी करने वालों के साथ रामकथा भी वृहत्तर भारत में पहुँच गई। उत्तर में तिब्बत, चीन, खेतान, साईबेरिया, पूरब में हिन्देषिया, हिन्दीचीन, कम्बोडिया, इंडोनेषिया, मलेषिया, ब्रह्मदेष, दक्षिण में लंका तक सदियों से रामकथा वहाँ के जनजीवन में ढलकर लोकप्रिय कथारूप में स्वीकृत रही है तो दूसरी ओर समय की धारा के साथ रूपाकार बदलती भाषा-बोलियों ने भी अपनी तरह से रामकथा को समय की सरिता में डुबकी लगाकर उसे और अधिक निखारा है। हर बार रामकथा पहले से ज्यादा उज्ज्वल बनी और समकालीन समस्याओं का निदान ढूँढती रही। वे राम ही तो है जो सत्ता के प्रष्नों, संषयों को जन के साथ मिलकर समाधित करते हैं तो जन की समस्याओं का निराकरण भी जन की सहायता से करते हैं। अलग-अलग समय पर रची गई रामकथाएँ मानों आदि कवि बाल्मीकि के राम को काल के अनंत प्रवाह की सहभागी बना बैठी है क्योंकि राम **"समाज के आन्तरिक मूल्य"**[४] के प्रहरी है।

किसी समाज में जब मूल्यों का क्षरण आरम्भ हो जाता है तो उस समाज और राष्ट्र का पतन कोई नहीं रोक सकता। ऐसे में मूल्यों के लिए सर्वस्व अर्पित करने वाला महाव्यक्तित्व ही राष्ट्र का उन्नायक हो सकता है फिर वह यूटोपिया ही क्यों ना सिद्ध हो। रामकथा के ३०० से ज्यादा प्रकार इसी तथ्य के द्योतक हैं। दुनिया का प्राचीनतम देष होने के कारण भारत को काल के झंझावत सबसे ज्यादा झेलने पड़े हैं। वैदिक प्रज्ञाषक्ति और प्रकृति के वरदहस्त ने इस राष्ट्र को शेष विष्व की तुलना में समृद्ध और सषक्त बनाया तो विदेषी लुटेरों की आँखें भी इस पर गढ़ गई। कुछ आए तो लूटमार करके चलते गए कुछ यहीं बस गए। पर दोनों ही श्रेणियों ने भारत को ऐसे घाव दिए जो नासूर बनकर आज तक रिस रहे हैं। राम के जीवन को अपना सर्वस्व अर्पित करने वाले तुलसी जैसे महामना के लिए तो उस स्थिति में हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना सम्भव नहीं था जो आम जन को यातनाओं के रौरव नरक में भस्म कर रही थी। राम ही तुलसी को लोकमंगलकारी दृष्टि प्रदान कर संवदेना का मलहम प्रदान करते हैं। डॉ. जगदीष प्रसाद शर्मा का कथन यहाँ समीचीन बैठता है कि- "किसी मानव के व्यक्तित्व के निर्माण में परिस्थितियों का हाथ होता है, किन्तु तुलसीदास जैसे महात्माओं के व्यक्तित्व का महत्त्व परिस्थितियों के साथ समझौता करने में उतना नहीं होता जितना उनको अपने अनुकूल बनाने में होता है। समकालीन परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने के निमित्त ही तुलसीदास ने अपनी पूर्णषक्ति का संकलन कर उसे 'मानस' में लगाया। अतएव उनका वास्तविक व्यक्तित्व 'मानस' में प्रकट हुआ।"[५] यहाँ पर गोस्वामी तुलसीदास जी के 'रामचरितमानस' की पृष्ठभूमि के भारत वर्ष को समझना भी जरूरी है। अकबर के समकालीन तुलसी का युग सामाजिक दृष्टि से हिन्दू-जनता के पतन का युग था। "मुस्लिम शासन ने हिन्दुओं की प्रगति को ठप्प कर दिया था। उनके सब मठों और सम्पन्न मंदिरों को लूटा गया और कब्जे में कर लिया गया और इस प्रकार हिन्दुओं के ज्ञान-पीठ ध्वस्त कर दिये गये।"[६] "वैदिक युग में जो स्त्री पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर घर से लेकर युद्ध क्षेत्र में साथ जाती थी (केकैयी को युद्धभूमि में ही दषरथ से

दो वर मिले थे) उसे इस्लामिक शासक-वर्ग की स्त्रियों के अनुकरण और अपने सतीत्व की रक्षा के लिए पर्दा-प्रथा में भेज दिया गया। मजदूरों को जबरन काम पर बुला लिया जाता था और उनका पारिश्रमिक काम के अनुसार न होकर सरकारी अफसर या अमीर की सनक पर निर्भर करता था। मजदूरों से बलपूर्वक काम लेने के लिए उनकी कोड़ों से सख्त मरम्मत की जाती थी।"[७] किसानों की दुर्दषा तो मजदूरों से भी बढ़कर थी। गरीब किसानों से लगान कठोरता से वसूल किया जाता था और जब वे नहीं दे पाते थे तो उनकी स्त्री और बच्चों को गुलाम बना लिया जाता था।[८] ..... १५६० के आस-पास सीजर फैडरिक ने गुजरात में बच्चों की बिक्री का उल्लेख किया है।[९] लेकिन शासकों के शोषण-तन्त्र और दमनचक्र से आहत हिन्दू प्रतिभा इस युग में अपने पूर्ण उत्कर्ष पर थी। रामानन्द, वल्लभ, कबीर, तुलसीदास, चैतन्य आदि महान विचारक और सन्त इसी युग में हुए। डॉ. ईष्वरी प्रसाद के अनुसार भक्तिकालीन दार्षनिकों और भक्तों द्वारा की गई उदात्त सत्यों की अभिव्यक्ति को हिन्दू-प्रतिभा का गौरवास्पद, अविस्मरणीय प्रदेय माना जा सकता है क्योंकि मुस्लिम संरक्षण से दूर रहकर भी उनकी उपलब्धियाँ महान थी।[१०] तुलसी इसी मूर्धन्य चेतना के विचारक, कवि, दार्षनिक, धर्म व समाज-सुधारक के रूप में प्रकट होते हैं, जो भारतीय जीवन-दर्षन और संस्कृति को रामकथा के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं। अपने समय के दुराचारी शासकों को ही उन्होंने राक्षसों के रूप में चित्रित किया है। रामचरितमानस का बालकांड तो समकालीन दुर्दषा का स्थान-स्थान पर चित्रण करता है-

"कामरूप खल जिनस अनेक ॥
कुटिल भयंकर विगत विवेका
कृपा रहित हिंसक सब पापी ।
बरनि न जाहिं विष्व परितापी ।"[११]

दरअसल इस्लामिक आक्रमणकारियों ने अपने बार्बरिक अत्याचारों से हिन्दू राजाओं का मनोबल तोड़, उनके तेज का हरण कर, उन्हें घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया। निस्तेज शासकों की प्रजा भी दीन-हीन हो जाती है। मध्यकालीन भारत की अधिकांष जनता मुस्लिम शासकों के उत्पीड़न से बचने के लिए अपनी संस्कृति, आदर्षों, जीवन मूल्यों, परम्पराओं से विमुख होने लगी। ऐसे घटाघोप को भक्तिकाल के संत कवियों ने अपनी वाणी और ज्ञान के प्रकाष से दूर करने का प्रयास किया। कबीर, नानक, दादू, रैदास, मीरा, सूर आदि सैंकड़ों ज्ञात और अज्ञात संत अपने-अपने क्षेत्र में अपने-अपने तरीके से 'धर्म' की संजीवनी से मूर्च्छित हिन्दू समाज की मूर्च्छा दूर करने का प्रयास कर रहे थे। गोस्वामी तुलसीदास ने 'श्रीराम' के रूप में वह सूर्यमणि ढूंढ निकाली जिसकी आभा में भारत ही नहीं विष्व भी भासित हुआ और उस 'रामचरितमानस' की आभा २१वीं सदी में भी कम नहीं हुई है। तुलसी ने रामकथा के माध्यम से विभिन्न सम्प्रदायों एवं मतों के बीच की खाई को पाटने का अद्भुत कार्य किया। गोस्वामी तुलसी ने 'रामचरिमानस' की रचना से भारत के पुनर्जागरण का भी महत्ती कार्य किया है और उसका महत्त्व यूरोप में पुनर्जागरण लाने वाली क्रांतियों से कम नहीं है। अंतर इतना है कि यूरोप की क्रांतियाँ बंदूक की गोली, हिंसा और रक्तपात की कीच के बीच सफल हुई तो तुलसीदास जी ने भारतीय संस्कृति की पहचान अहिंसा को अपनाते हुए अपनी लेखनी से समाज परिवर्तन की अलख जलाई। अहिंसक क्रांति का नायक तो कोई महामानव ही हो सकता है। तुलसीदास को जब समकालीन नायक नहीं मिला तो उन्होंने इतिहास की उपत्यकाओं में विश्राम कर रहे 'श्रीराम' को जागृत कर अद्वितीय 'मानस' की सर्जना कर दी।

गोस्वामी तुलसीदास जानते थे 'राम' से बड़ा समन्वयक नायक कोई नहीं हुआ जो भिन्न-भिन्न मतवादियों, समुदायों में ही नहीं शक्ति और भक्ति जैसे गुणों में भी सामंजस्य बिठाने में सिद्धहस्त थे। राम ने स्वेच्छाचारी रावण की रक्ष (राक्षस) संस्कृति का पराभव कर मर्यादा का अनुपालन करने वाली आर्य संस्कृति का

वैष्विर प्रचार किया। अद्भुद तथ्य यह है कि राम ने अपने राज्य के विस्तार का विचार तो स्वप्न में भी नहीं सोचा बल्कि आर्य संस्कृति का प्रचार और प्रसार भी अन्य विष्व विजेताओं के समान निर्दोष मानव समुदाय पर आक्रमण करके नहीं किया। रावण से उनका युद्ध सच्चा धर्म युद्ध था जो प्रचण्ड अत्याचारी संस्कृति को नष्ट करता है। मानवीय अवगुण राम के व्यक्तित्व को छू भी नहीं पाते। स्वर्णमयी लंका का वैभव उन्हें लुभा नहीं पाता। राम को तो अपनी जन्मभूमि अयोध्या ही प्रिय थी इसलिए विभीषण जब राक्षस-धर्म त्याग, आर्य धर्म में दीक्षित हुए तब राम उन्हें लंका का राज्य सौंपकर वापस लौट जाते हैं। यह एक प्रकार से विदेषी आक्रमणकारियों को समझाने का ही अप्रत्यक्ष प्रयास था कि मातृभूमि से बढ़कर कुछ नहीं होता। तुलसी श्रीराम की कथा को भारतीय संस्कृति, वाङ्मय एवं मनीषा के मेरुदण्ड के रूप में स्थापित कर रामचरितमानस को विष्वाङ्मय की भी अमूल्य विभूति के रूप में संसार के सम्मुख रखते हैं। अनेक विदेषी विद्वानों ने इसीलिए तुलसीदासजी की भूरि-भूरि प्रषंसा भी की है।

अकबर 'द ग्रेट' के लेखक सुप्रसिद्ध इतिहासकार विंसेट स्मिथ ने गोस्वामी तुलसीदास जी को अपने युग का सबसे महान व्यक्ति माना था। उनकी दृष्टि करोड़ों नर-नारियों के हृदय पर तुलसी के अधिकार, प्रभाव और रामकथा के माध्यम से दिए गए संस्कारों को अकबर की सभी विजयों से कई गुनी बड़ी और चिरस्थायी विजय मानती है। जार्ज ग्रियर्सन ने तो स्पष्ट शब्दों में कहा था- 'तुलसीदास द्वारा प्रणीत रामायण का उत्तर भारतीय षिक्षित-अषिक्षित समाज में इतना प्रचार और प्रभाव है जितना सामान्य ईसाइसों में बाइबिल का नहीं है।' यह कथन पूर्णतः सत्य है। हम नहीं जानते हैं कि बाइबिल या अन्य धर्मग्रंथों को उनके अनुयायियों ने कितना कंठस्थ किया है किन्तु रामचरितमानस जैसे विषाल ग्रंथ को कंठस्थ रखने वाले तथाकथित अषिक्षित ग्रामीणजन आज भी मिल जाते हैं। पूरा ना सही थोड़ा सही, थोड़े में भी पंक्ति ही सही आज भी रामचरित मानस की पंक्तियों का प्रयोग हिन्दी भाषी षिक्षित और अषिक्षित जन कहावतों के रूप में करते हैं। यह रामचरितमानस की निर्मल कांति और तुलसी के रूप में मानव की प्रज्ञाषक्ति की सर्वोच्चता ही है जो इस ग्रंथ का दुनिया की सभी विकसित भाषाओं में अनुवाद करा कर जन को जीवन दर्षन और साहित्यकारों को साहित्य सृजन की राह प्रषस्त करती है।

लोकनायक तुलसी ही है, जो साहित्यकारों को राम के जीवन के विविध पक्षों को गइराई से पड़ताल कर समकालीन युगबोध की यथार्थ अभिव्यक्ति का मार्ग प्रषस्त करते हैं तथा दूसरी ओर उनका महाकाव्य आम आदमी को श्रीराम के माध्यम से दुःख सहने और स्थितियों से जूझने की शक्ति देता है। रामचरितमानस को कंठस्थ कर अंग्रेजों की साजिष के षिकार गिरमिटया मजदूरों ने मॉरिषस, फिजी, गिनी, ट्रिडिनाड, केनिया, घाना, युगांडा आदि देषों में राम को ही अपना साथी मानकर कई पीढ़ियों तक दुःख-दर्द को सहन किया था। आज भी इन देषों में मिनी भारत और उसकी भाषा जीवंत है तो उसका कारण रामकथा और रामचरितमानस की अवधी भाषा है। पर राम तो राम है। वे भला मध्ययुग की दहलीज पर किस तरह से ठिठककर रह सकते हैं। उनकी बाँह थामकर ही तो भारत शक्ति का संचय करता आ रहा है, वरना प्रतिवर्ष मंचित होने वाली शहरों की चकाचौंध भरी रामलीलाओं से लेकर ग्रामीण अंचलों तक ही रामलीलाओं के मंचन की धूम न मची होती। नन्हें-मुन्ने बालक-बालिकाएँ हाथ में सरकंडों, बांस, कागज आदि के तीर-कमान, तलवार लेकर राम कथा के पात्रों को आज भी स्वयं जीवंत करते लगते हैं। राम ही साहित्य को स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान और स्वातंत्र्योत्तर भारत में 'राम की शक्ति पूजा' (निराला), राष्ट्रकवि मैथलीषरण गुप्त का 'साकेत', आचार्य चतुर्सेन का 'वयम्रक्षामः', नरेन्द्र कोहली का काव्य 'संषय की एक रात' और वृहत उपन्यास 'अभ्युदय', आचार्य

सोहनलाल रामरंग का 'युगपुरुष तुलसी' आदि भी 'राम' को नए आयामों के साथ देखने की दृष्टि प्रदान करते हैं।

दरअसल आधुनिक युग ने मनुष्य के सामने एक नई चुनौती खड़ी कर दी है। जैसे-जैसे औद्योगिकीकरण ने दुनिया में रफ्तार पकड़ी वैसे-वैसे दैत्याकार होते पूंजीवाद ने पुराने आदर्शों, मूल्यों को निगलना आरम्भ कर दिया। अभी 'मार्क्सवाद' जैसी अवधारणा अपनी जगह बनाने में जुटी थी कि उत्तर आधुनिकतावाद के दौर ने उसे भी पटखनी दे दी। इस दौर में सभी पुरानी विचारधाराओं, वादों, प्रवृत्तियों, संस्थानों का अंत घोषित है। एक प्रकार से यह आधुनिकतावाद का नया विस्तार है- **"उसकी सीमाओं को तोड़ता 'पावर षिफ्ट' का मानो नया विज्ञान और भूगोल है। एक ऐसी चुनौती-भरी विचारधारा जिसमें समस्त मानवीय चिंतन, साहित्य, व्यवस्था, विचारधारा, धर्म, दर्षन, इतिहास, आंदोलन, प्रवृत्तिवाद, सभ्यता-संस्कृति, मूल्य व्यवस्था, सभी को उत्तर अर्थात् 'पोस्ट' या व्यतीत घोषित कर दिया गया है।"**[१२] पुराना नष्ट हो रहा है और नया गढ़ा ना जाए तो किसी भी सृजक को सर्जना के क्षणों में अतीत में गोता लगाना ही पड़ता है और अतीत में राम के सिवा कोई ऐसा नायक नहीं जो लोक से लेकर परलोक तक सर्व स्वीकार्य हो। राम की उदारता लोक से लेकर राज सत्ताओं तक में सहज रूप से स्वीकार है। ग्रामीण अंचलों में आज भी लोक अपनी-अपनी रामकथा के गायन से अपने आंतरिक भावों को अभिव्यक्त करता है। थाईलैंड (म्यांमार) में अब भी राजा 'राम' की ही पदवी धारण करते हैं जबकि यह बौद्ध देष है। यहाँ पर रामकथा को रामकियेन कहा जाता है। बैंकाक एयरपोर्ट का नाम ही स्वर्णभूमि है और उसकी सज्जा में रामायण के प्रमुख पात्रों की विषालकाय मूर्तियाँ लगी हुई है। सम्भवतः इसीलिए राष्ट्रकवि मैथलीषरण गुप्त ने साकेत में लिखा था-

राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है
कोई कवि बन जाए सहज संभाव्य है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी भी इसी कारण प्रतिदिन प्रार्थना सभा में पतितों को भी पावन करने वाले 'रघुपति राघव राजा राम.....' का प्रिय भजन सुनकर अपने कर्मक्षेत्र के लिए शक्ति ग्रहण किया करते थे। स्वतंत्रता के उपरान्त जब नए भारत के नए आदर्शों को लिखित रूप में वर्णित करने के लिए संविधान बनाया गया तो उसके प्रथम पृष्ठ पर श्रीराम का ही चित्र छापा गया जो राष्ट्रपिता गाँधीजी की राम के प्रति निष्ठा को व्यक्त करता है। आज संविधान के प्रति से लेकर रामलीलाओं के मंचन तक में भले ही राम के व्यक्तित्व को धर्म निरपेक्षता और मनोरंजन के नाम पर धूमिल करने का कुप्रयास किया जा रहा है पर 'श्रीराम' को भारतवर्ष ही नहीं, विष्व के मानचित्र से भी कभी खारिज नहीं किया जा सकता क्योंकि राम का चरित तो 'न भूतो न भवति' की सीमाओं को लाँघकर हर युग का साक्षी है। साइबर मीडिया, सोषल मीडिया के दौर में फारवर्ड होते 'श्रीराम' से जुड़े असंख्य संदेष 'श्रीराम' की महत्ता आने वाली पीढ़ियों के लिए भी महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य घोषित करती है।

सूचना प्रौद्योगिकी और कम्प्यूटर के नित्य नये बढ़ते अनुप्रयोगों ने विष्व-ग्राम की अवधारणा को पुष्ट और सुदृढ़ किया है, जो कि सुखद है किन्तु अत्यधिक टेक्नोलॉजी के विकास से इक्कीसवीं सदी ही नहीं अपितु उससे आगे की पीढ़ी में भी हृदय शून्यता के संकेत दिखाई पड़ते हैं, जो कि एक चिंता का विषय है। इस शून्यता को महामानव राम ही पाट सकते हैं जो कि विज्ञान के धाम और विचार की एक संज्ञा है। राम रूपी विचार में निहित-धृति, क्षमा, दमन, अस्तेय, शौचं, इन्द्रिय-निग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध जैसे मानवीय गुणों को अपनाकर ही मानवता को और भारतीयता को बचाया जा सकता है।

रामायण जैसा महाकाव्य बाल, युवा और वृद्ध सभी को सकारात्मक विचारों के साथ जीवन को पूर्ण

ढंग से जीने हेतु प्रेरित करता है। वर्तमान परिदृष्य में आज की युवा पीढ़ी जिस प्रकार अपनी मातृभूमि से पलायन कर रही है इस संदर्भ में मुझे रामायण के उस प्रसंग का उल्लेख करना समीचीन लगता है, जिसमें लंका विजय के उपरांत लक्ष्मण भगवान राम से लंका में ही रूकने की विनती करते हैं परन्तु भगवान श्रीराम कहते हैं **"जननीजन्मभूमिष्च स्वर्गादपि गरीयसी"** अर्थात् मातृभूमि का महत्त्व स्वर्ग से भी बढ़कर है। इस प्रसंग से युवाओं को प्रेरणा लेनी चाहिए कि वे चाहे दुनिया के किसी में कोने में रहे और कोई भी रोजगार या पद प्राप्त कर लें लेकिन मातृभूमि को कभी भी विस्मृत न होनें दें क्योंकि मनुष्य की जड़ें उसकी मातृभूमि से ही जुड़ी होती हैं और राम जैसे विचार रूपी संज्ञा में ही भारतीय जन और संस्कृति सुरक्षित है।

सम्भवतः इसीलिए **कुमार विष्वास** जैसा मंचीय कवि भी जब विचारणा की भूमि पर उतरता है तो उन्हें भी 'अपने-अपने राम' के साथ श्रीराम के चरित की ही अराधना करनी पड़ती है। गांधी हो या अन्य विचारक यदि किसी को भारतवर्ष की अन्तरात्मा को जानना है, भारत माता की संतति के दुःख-दर्द को दूर करने का मार्ग ढूंढना है तो उसे राम को अपनाकर उनके दिखाए रास्ते पर चलना ही होगा। क्योंकि कुमार विष्वास के ही शब्दों में कहें तो-

"मानवता की खुली आँख के, सबसे सुंदर सपने राम
जिह्वा भी अर्थवती हो गई लगी जब जपने राम
माता-पिता, गुरुजन, परिजन ने अपने-अपने देखे थे
दुनिया भर ने देखे अपने, अपने-अपने-अपने राम।"[१३]

राम के साथ सदियों से भारत के लोग अपनत्व के साथ अपने-अपने तरीकों और विष्वासों के साथ जुड़े हुए हैं। सम्भवतः इसीलिए ३०० से ज्यादा रामकथाएँ अलग-अलग क्षेत्रों में मिलती है। भारत में तो हर राज्य की अपनी रामकथा है जो लोक परम्परा से बनी है क्योंकि दषरथ नंदन राम जब अयोध्या से निकल जंगल-जंगल जाकर लोक को आततायियों से लड़ने का आत्मबल दे रहे थे तो लोक ने उन्हें अपने-अपने तरीके से अपनाया। रामचरितमानस जैसे ग्रंथ के मीमांसक **डॉ. रामनारायण शर्मा** इसीलिए लिखते हैं कि- **"राम तो रमणीय परमतत्त्व और एक प्रकार से विचारतीर्थ है। अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड नायक, परात्पर पूर्णतम, निर्गुण, निराकार, शुद्ध ब्रह्म ही सकल कल्याणमय, गुणगण-निलय, सगुण, साकार, नयनों के लिए रमणीय, वचन की दृष्टि से सुंदर, दषरथनंदन, कौषल्यानन्दन श्रीराम के रूप में प्रकट होते हैं। ..... राम अमर है, और विचार की संज्ञा है तथा विचार कभी मरता नहीं।"[१४]**

राम तो सुंदर विचारों की प्रतिमूर्ति है। मनुष्यता की खुली आंख का सुंदर सपना जो क्षरणषील आधुनिकता रूपी उच्छश्रृंखलता से उपजे अंधियारे से मुक्ति दिलाने वाले प्रकाष पुंज के रूप में आज भी स्वर्णिम आभा बिखेर रहे हैं। अतः इक्कीसवीं सदी ही नहीं जब तक धरा पर मानव जीवन है तब तक मानवीय गुणों के प्रतीक राम मनुष्यता के आराध्य बने रहेंगे क्योंकि उनकी प्रतीकात्मक उपस्थिति सन्मार्ग को सदैव ही प्रषस्त करती है।

संदर्भ

१.तुलसी ग्रंथावली, भाग-१, खंड १, उत्तरकाण्ड, पृ. ५०२
२.रामचरितमानस : बालकाण्ड, मंगलाचरण-ष्लोक ७
३.उर्वषी, जनवरी २०१७, पृ. ६३
४.The Intrinsic Values of SSociety – Dagobert D. Runes, p. 782
५.रामचरितमानस का मनोवैज्ञानिक अध्ययन- डॉ. जगदीष प्रसाद शर्मा, किताब महल, इलाहाबाद, १६४, पृ. १७
६- Sri Jadunath Sarkar, Mugal Administration, Page 250-251
७.Dr. Satys Parkash Sangar, Crime and Punishment in Mughal India, Page 145
८. Ibid., Page 131

९. डब्ल्यू.एच.मोरलैंड, अकबर की मृत्यु के समय का भारत, पृ. २२२-२२३
१०. Dr. Ishwri Prasad, History of Medieval India, page 533
११. रामचरितमानस : बालकाण्ड, १७५ (४)
१२. कृष्ण दत्त पालीवार : उत्तरआधुनिकतावाद की ओर, पृ. १७
१३. अपने-अपने राम, कुमार विष्वास का ३-४ अगस्त, २०१९ का जयपुर कार्यक्रम
१४. रामचरितमानस का मूल्यपरक विवेचन : डॉ. रामनारायण शर्मा, बोधी प्रकाषन, जयपुर पृ. ३५६